चर्पट-पञ्जरिका

अर्थात्

मोह-मुद्गर

(हिंदी-अनुवाद-सहित)

अनुवादक

बनारस-निवासी राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द

लखनऊ

केसरीदास सेठ, सुपरिंटेंडेंट द्वारा
नवलकिशोर प्रेस में मुद्रित और प्रकाशित

सन् १९२५ ई०

मोह-मुद्गर।

भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते। प्राप्ते सन्निहिते मरणे नहि नहि रक्षति डुकृञ् करणे॥ भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते॥ १॥

(ध्रुवपदम्)

हे मूढ़मते! गोविंद को भज, गोविंद को भज, गोविंद को भज, क्योंकि मृत्यु निकट आने पर 'डुकृञ्करणे' नहीं रक्षा करेगा इसलिये हे मूढ़मते! तू गोविंद को भज, गोविंद को भज, गोविंद को भज॥ १॥

बालस्तावत् क्रीडाशक्तस्तरुणस्तावत् तरुणीरक्तः। वृद्धस्तावच्चिन्तामग्नः पारे ब्रह्मणि कोऽपि न लग्नः॥ भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते॥ २॥

जबतक बालक, तबतक खेल में सक्त; जबतक युवावस्था में, तबतक युवती में रक्त; जबतक बूढ़ा, तबतक

चिंता में डूबा हुआ; इस प्रकार परब्रह्म में कोई भी मन नहीं लगाता इसलिये तू गोविंद को भज० ॥ २ ॥

अंगं गलितं पलितं मुंडं जातं दशनविहीनं तुंडम् । वृद्धो याति गृहीत्वा दंडं तदपि न मुञ्चत्याशापिंडम् ॥ भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते ॥ ३ ॥

अंग गल गये, शिरके बाल सफ़ेद हो गए, मुख विना दाँतके होगया, बूढ़ा लकड़ी पकड़कर चलता है, पर तो भी आशा का पिंड नहीं छोड़ता इसलिये तू गोविंद को भज० ॥ ३ ॥

दिनमपि रजनी सायंप्रातः शिशिरवसन्तौ पुनरायातः । कालः क्रीडति गच्छत्यायुस्तदपि न मुञ्चत्याशावायुः ॥ भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते ॥ ४ ॥

दिन और रात, साँझ और सबेरा, एवं जाड़ा और वसंत फिर-फिरकर आते हैं तथा काल खेलता है और आयु चली जाती है, पर तो भी आशा की वायु नहीं छोड़ती इसलिये तू गोविंद को भज० ॥ ४ ॥

नारीस्तनभरजघननिवेशं दृष्ट्वा मायामोहावेशम्। एतन्मांसवसादिविकारं मनसि विचारय वारंवारम् ॥ भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते ॥ ५ ॥

स्त्री के कुचों का भार और दोनों जाँघों का मध्य देखकर, जो माया और मोह के द्वार हैं, ये सब मांस और चरबी के विकार हैं । यह तू अच्छी भाँति मन में विचार कर ले और गोविंद को भज० ॥ ५ ॥

अग्रे वह्निः पृष्ठे भानुः रात्रौ चिबुकसमर्पितजानुः । करतलभिक्षा तरुतलवासस्तदपि न मुञ्चत्याशापाशः ॥ भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते ॥ ६ ॥

आगे अग्नि, पीछे सूर्य और रात को डाढ़ी घुटने पर रखता है, हाथ में भीख और पेड़ के नीचे वास है, तो भी आशा-रूपी फाँसी को नहीं छोड़ता, इसलिये तू गोविंद को भज० ॥ ६ ॥

रथ्याकर्पटविरचितकन्था पुण्यापुण्यविवर्जितपन्था । नाहं न त्वं नायं लोकस्तदपि किमर्थं क्रियते शोकः ॥ भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते ॥ ७ ॥

तूने रास्ते के पड़े हुये चिथड़ों से गुदड़ी बनाई है, पंथ पाप-पुण्य से वर्जित है, न मैं हूँ, न तू है और न यह संसार है, फिर किसके लिये शोक करता है, इसलिये तू गोविंद को भज० ॥ ७ ॥

वयसि गते कः कामविकारः शुष्के नीरे कः कासारः । क्षीणे वित्ते कः परिवारस्तत्त्वे ज्ञाते कः

संसारः ॥ भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते ॥ ८ ॥

अवस्था चली जाने पर फिर काम का विकार क्या है, पानी सूख जाने पर तालाब क्या है, और धन क्षीण हो जाने पर परिवार क्या है, इसी तरह तत्त्व जानने पर संसार क्या है, इसलिये तू गोविंद को भज० ॥ ८ ॥

यावद्वित्तोपार्जनशक्तस्तावन्निजपरिवारे रक्तः । पश्चाद्धावति जर्जरदेहे वार्तां पृच्छति कोऽपि न गेहे ॥ भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते ॥ ९ ॥

जबतक धन इकट्ठा कर सकता है तबतक अपने परिवार में रक्त रहता है, फिर जब जर्जर देह होकर दौड़ता-फिरता है तब घर में कोई भी बात नहीं पूछता, इसलिये तू गोविंद को भज० ॥ ९ ॥

जटिलो मुंडितलुंचितकेशः काषायाम्बरबहुकृतवेशः । पश्यन्नपि च न पश्यति लोकः, उदरनिमित्तं बहुकृतवेशः ॥ भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते ॥ १० ॥

जटाधारी, मुड़े हुये और नुचे बाल तथा भगुआ पहनकर भाँति-भाँति के वेश रचे हुये देख करके भी लोग नहीं देखते हैं, ये सब वेश पेट भरने के लिये करते हैं, इसलिये तू गोविंद को भज० ॥ १० ॥

गेयं गीतानामसहस्रं ध्येयं श्रीपतिरूपमजस्रम् ।
नेयं सज्जनसंगतिचित्तं देयं दीनजनाय च वित्तम् ॥
भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते ॥ ११ ॥

गीता और सहस्रनाम पढ़ो, रमा-पति के रूप का सदा ध्यान करो, सज्जनों की संगति में चित्त लगाओ, दीन जनों के अर्थ धन दो, और गोविंद का भजन करो ॥ ११ ॥

भगवद्गीता किञ्चिदधीता गंगाजललवकणिका पीता । येनाकारि मुरारेरर्चा तस्य यमोऽपि करोति न चर्चा ॥ भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते ॥ १२ ॥

जिसने थोड़ी भी भगवद्गीता पढ़ी है, कणिका-मात्र भी गंगा-जल पिया है और मुरारि की पूजा की है, उसकी यम भी चर्चा नहीं करता, इसलिये तू गोविंद को भज० ॥ १२ ॥

पुनरपि जननं पुनरपि मरणं पुनरपि जननीजठरे शयनम् । इह संसारे भवदुस्तारे कृपया पारे पाहि मुरारे ॥ भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते ॥ १३ ॥

फिर भी जन्म लेना है और फिर भी मरना और फिर भी माता के जठर में सोना है, इसलिये इस दुस्तर भव (संसार) में हे मुरारे ! कृपा करके मुझे पार लगाओ, गोविंद को भज० ॥ १३ ॥

कस्त्वं कोऽहं कुत आयातः का मे जननी को मे तातः । इति परिभावय सर्वमसारं सर्वं त्यक्त्वा स्वप्नविचारम् ॥ भज गोविन्दं भज गोविन्दं गोविन्दं भज मूढमते ॥ १४ ॥

तू कौन है, मैं कौन हूँ, कहाँ से आया है, कौन मेरी मा, और कौन मेरा बाप यह विचार कर इस सर्व असार स्वप्न-विचार को छोड़ दे, और गोविंद को भज० ॥ १४ ॥

मोहमुद्गर भाषा-टीका-सहित समाप्त हुआ ।